हिमाचल प्रदेश राज्य

बनाम

सरदार सिंह

(क्रिमिनल अपील संख्या 1354/2008)

अगस्त 27, 2008

[डॉ. अरजीत पसायत और डॉ. मुकुंदकम शर्मा, जे जे]

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973- धारा 378(3) - प्रार्थना पत्र - उच्च न्यायालय से अपील करने की इजाजत, विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के आदेश के खिलाफ - उच्च न्यायालय द्वारा संक्षिप्त में खारिज - उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश कारणों के अभाव में धारणीय नहीं - उच्च न्यायालय को अपने में आदेश में कारण दिया जाना चाहिए था, भले ही संक्षिप्त, जो न्यायिक विवेक दर्शाता हो, जब उस आदेश को आगे चुनौती दी जा सकती है- उच्च न्यायालय को निर्देश, इजाजत देने हेतु, क्योंकि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत आधार सारहीन नहीं - स्वापक औषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 - धारा 15 - प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत - सहकारण आदेश की आवश्यकता।

प्रत्यर्थी ने धारा 15 स्वापक औषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 के अंतर्गत दण्डनीय तथाकथित अपराध कारित किए जाने का विचारण भोगा। उसे विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किया गया। अपीलार्थी - राज्य ने धारा 378(3) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अंतर्गत दोषमुक्ति के आदेश के विरूद्ध अपील करने की इजाजत हेतु

प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया। उच्च न्यायालय द्वारा उक्त प्रार्थना पत्र को संक्षिप्त में केवल "खारिज" लिखकर खारिज किया। इसलिए यह अपील की गई।

अपील स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया;

1. विचारण न्यायालय को संपूर्ण साक्ष्य का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना और फिर निष्कर्ष पर पहुंचना आवश्यक था। यदि विचारण न्यायालय द्वारा इस संबंध में चूक हुई, तो उच्च न्यायालय अपील पर विचार कर ऐसा करने के लिए बाध्य था। इस मामले के तथ्यों पर विचारण न्यायालय ने विधि द्वारा अपने कर्तव्यों की पालना नहीं की है। उच्च न्यायालय को ऐसी परिस्थितयों में इजाजत देनी चाहिए थी और उसके पश्चात प्रथम अपील न्यायालय के रूप में पत्रावली पर उपलब्ध संपूर्ण साक्ष्य को स्वतंत्र रूप से समीक्षा करनी चाहिए थी और अभियुक्त के दोषी होने या अन्यथा के संबंध में अपना निष्कर्ष देना था। इसमें शामिल प्रश्न मामूली नहीं था। दोषमुक्त किए जाने के प्राथमिक आधार कथित प्रत्यक्ष साक्षी द्वारा अभियोजन कहानी को समर्थन नहीं किया जाना प्रतीत होते हैं और इसलिए उनकी उपस्थिति संदिग्ध है। उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के आदेश के खिलाफ अपील की इजाजत नहीं देने का कोई कारण नहीं दिया है, और ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायालय इस तथ्य से अनभिज्ञ है इस अनुमित देने से इनकार करने से दोषमुक्ति के आदेश की अपीलीय मंच द्वारा बारीकी से जांच किया जाना पूर्णतः खो चुका है। उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के विरूद्ध अपील को जिस तरह से देखा गया है उसमें काफी कुछ अपेक्षित है। कारण आदेश में स्पष्टता लाते हैं। न्याय के स्पष्ट विचार पर, उच्च न्यायालय को अपने में आदेश में कारण दिया जाना चाहिए था, भले ही संक्षिप्त, जो न्यायिक विवेक दर्शाता हो, जब उस आदेश को आगे चुनौती दी जा सकती है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश कारणों के अभाव में धारणीय नहीं है। इजाजत दिए जाने के प्रार्थना पत्र में सकारण आदेश आवश्यक है। ऐसे

मामलों में कारणों को स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता को न्यायिक रूप से अनिवार्य माना गया है। इस न्यायालय द्वारा कानून की घोषणा का पालन करने के लिए न्यायिक अनुशासन किसी भी प्राधिकरण न्यायालय द्वारा किसी वजह से नहीं छोडा जा सकता, चाहे वह राज्य का सर्वोच्च न्यायालय भी हो, जो भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 141 से अनभिज्ञ है। [पैरा 8] [865-बी-एच, 866-ए-बी]

1.2. कारण वस्तुनिष्ठता की व्यक्तिपरकता को प्रतिस्थापित करते हैं। कारणों को अंकित किए जाने का महत्व इस बात पर दिया जाता है कि यदि निर्णय से किसी रहस्यमय चेहरे का पता चले, उसके मौन से न्यायालय द्वारा अपीलीय कार्य के निष्पादन या निर्णय की वैधता का निर्धारण करने वाली न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करना लगभग असंभव हो सकता है। कारण दिए जाने का अधिकार सुदृढ न्यायिक प्रणाली का अनिवार्य हिस्सा है। जो न्यायालय मामले में द्वारा न्यायिक विवेक को दर्शाता हो। दूसरा तर्क यह है कि प्रभावित पक्ष उसके विरूद्ध किए गए निर्णय की वजह जान सके। आदेश में कारण स्पष्ट करना प्राकृतिक न्याय की हितकारी आवश्यकताओं में से एक है। [पैरा 11] [866-सी-एफ]

1.3. उक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय को अपील की इजाजत देने हेतु निर्देशित किया जाना उपयुक्त है क्योंकि उठाए गए आधार सारहीन नहीं है।

उत्तरप्रदेश राज्य बनाम बेटन और अन्य (2001) 10 एससीसी 607; महाराष्ट्रा राज्य बनाम विटठल राव प्रीतिराव चवान एआईआर (1982) एसी 1215; जवाहर लाल सिंह बनाम नरेश सिंह और अन्य (1987) 92 एससीसी 222 और पंजाब राज्य बनाम भाग सिंह (2004) 1 एसीसी 547 पर भरोसा किया।

ब्रिन बनाम अमलगमेटिड इंजिनियिरिंग युनियन (1971) 1 एएलएल ई.आर. 1148 और एलेक्जेंडर मशीनरी (डूडली) लिमिटेड बनाम क्रेबट्री (1974) एलसीआर 120 -संदर्भित।

केस कानून संदर्भ

एआईआर (1982) एस 1215	भरोसा किया	पैरा 8
(1987) 92 एससीसी 222	भरोसा किया	पैरा 8
(2001) 10 एससीसी 607	भरोसा किया	पैरा 8
(1971) 1 ऑल ई.आर. 1148	संदर्भित	पैरा 9
(1974) एलसीआर 120	संदर्भित	पैरा 9
(2004) 1 एससीसी 547	भरोसा किया	पैरा 10

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील संख्या 1354/2008।

नरेश के. शर्मा अपीलार्थी की ओर से।

के. शारदा देवी प्रत्यार्थी की ओर से।

इस न्यायालय का डॉ. अरजीत पसायत, जे. निर्णय सुनाया गया।

1- इजाजत दी गई।

2. इस अपील में विद्वान हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा राज्य की ओर से प्रस्तुत प्रार्थना पत्र अंतर्गत धारा 378(3) दण्ड प्रक्रिया संहिता के

निर्णय को चुनौती दी गई है। प्रार्थना पत्र संक्षिप्त में केवल ''खारिज'' लिखकर खारिज किया गया।

3. प्रत्यार्थी ने धारा 15 स्वापक औषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 के अंतर्गत दण्डनीय तथाकथित अपराध कारित किए जाने का विचारण भोगा।

4. विचारण न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्देश इस आधार पर दिए कि सरकारी गवाहों की साक्ष्य स्वीकार नहीं की जा सकती और इसलिए दोषमुक्ति की गई। प्रार्थना पत्र अंतर्गत धारा 378(3) दण्ड प्रक्रिया संहिता पेश किया गया जो संक्षिप्त रूप से खारिज किया जावे।

5. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने कथन किया कि प्रार्थना पत्र को निस्तारण किए जाने का तरीका इस न्यायालय द्वारा पारित कई निर्णयों के विरूद्ध है।

6. प्रत्यार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने कथन किया कि मामले में कोई गुणावगुण नहीं है इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा प्रार्थना पत्र को खारिज किया जाना सही है।

7. धारा 378(3) दण्ड प्रक्रिया संहिता उच्च न्यायालय की दोषमुक्ति के आदेश की अपील की इजाजत से संबंधित है। धारा 378 दण्ड प्रक्रिया संहिता:

> "(1) - उपधारा (2) में जैसा उपबन्धित है उसके सिवाय और उपधारा (3) और उपधारा (3) और उपधारा (5) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए-

(क) जिला मजिस्ट्रेट, किसी मामले में, लोक अभियोजक को किसी संज्ञेय और अजमानतीय अपराध की बाबत किसी मजिस्ट्रेट द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेश से सेशन न्यायालय में अपील प्रस्तुत करने का निदेश दे सकेगा।

(ख) राज्य सरकार, किसी मामले में लोक अभियोजनक को उच्च न्यायालय से भिन्न किसी न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के मूल या अपीली आदेश से [जो खण्ड (क) के अधीन आदेश नहीं है] या पुनरीक्षण से सेशन न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेश से उच्च न्यायालय में अपील प्रस्तुत करने का निदेश दे सकेगी।]

(3)-(1) उपधारा (2) के अधीन [उच्च न्यायालय को कोई अपील] उच्च न्यायालय की इजाजत के बिना ग्रहण नहीं की जाएगी।"

8. विचारण न्यायालय को संपूर्ण साक्ष्य का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना और फिर निष्कर्ष पर पहुंचना आवश्यक था। यदि विचारण न्यायालय द्वारा इस संबंध में चूक हुई, तो उच्च न्यायालय अपील पर विचार कर ऐसा करने के लिए बाध्य था। इस मामले के तथ्यों पर विचारण न्यायालय ने विधि द्वारा अपने कर्तव्यों की पालना नहीं की है। उच्च न्यायालय को ऐसी परिस्थितयों में इजाजत देनी चाहिए थी और उसके पश्चात प्रथम अपील न्यायालय के रूप में पत्रावली पर उपलब्ध संपूर्ण साक्ष्य को स्वतंत्र रूप से समीक्षा करनी चाहिए थी और अभियुक्त के दोषी होने या अन्यथा के संबंध में अपना निष्कर्ष देना था। इसमें शामिल प्रश्न मामूली नहीं था। दोषमुक्त किए जाने के प्राथमिक आधार कथित प्रत्यक्ष साक्षी द्वारा अभियोजन कहानी को समर्थन नहीं किया जाना प्रतीत होते हैं और इसलिए उनकी उपस्थिति संदिग्ध है। उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के आदेश के खिलाफ अपील की इजाजत नहीं देने का कोई कारण नहीं दिया

है, और ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायालय इस तथ्य से अनभिज्ञ है इस अनुमित देने से इनकार करने से दोषमुक्ति के आदेश की अपीलीय मंच द्वारा बारीकी से जांच किया जाना पूर्णतः खो चुका है। उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के विरूद्ध अपील को जिस तरह से देखा गया है उसमें काफी कुछ अपेक्षित है। कारण आदेश में स्पष्टता लाते हैं। न्याय के स्पष्ट विचार पर, उच्च न्यायालय को अपने में आदेश में कारण दिया जाना चाहिए था, भले ही संक्षिप्त, जो न्यायिक विवेक दर्शाता हो, जब उस आदेश को आगे चुनौती दी जा सकती है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश कारणों के अभाव में धारणीय नहीं है। समान मत उत्तरप्रदेश राज्य बनाम बेटन और अन्य (2001) 10 एससीसी 607 में व्यक्त किया गया था। दो दशक पहले महाराष्ट्रा राज्य बनाम विटठल राव प्रीतिराव चवान एआईआर (1982) एसी 1215 में अपील की इजाजत हेतु प्रस्तुत प्रार्थना पत्र में सकारण आदेश की आवश्यकता को उजागर किया गया था। ऐसे मामलों में कारण दिए जाने की आवश्यकता को न्यायिक मान्यता प्राप्त है। यह मत फिर से जवाहर लाल सिंह बनाम नरेश सिंह और अन्य (1987) 92 एससीसी 222 में प्रतिपादित किया गया। इस न्यायालय द्वारा कानून की घोषणा का पालन करने के लिए न्यायिक अनुशासन किसी भी प्राधिकारण न्यायालय द्वारा किसी वजह से नहीं छोडा जा सकता, चाहे वह राज्य का सर्वोच्च न्यायालय भी हो, जो भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 141 से अनभिज्ञ है।

9. प्रशासनिक आदेशों के संबंध में लॉर्ड डेनिंग ने ब्रिन बनाम अमलगमेटिड इंजिनियिरिंग युनियन (1971) 1 एएलएल ई.आर. 1148 में व्यक्ति किया है कि कारण बताया जाना अच्छे प्रशासन का एक आधार है। एलेक्जेंडर मशीनरी (डूडली) लिमिटेड बनाम क्रेबट्री (1974) एलसीआर 120 में व्यक्त किया गया कि कारण दिए जाने की विफलता न्याय से वंचित रखती है। कारण फैसला लेने वाले के विवेक की विवाद और

उसके द्वारा फैसला या निष्कर्ष की एक कडी है। कारण वस्तुनिष्ठता की व्यक्तिपरकता को प्रतिस्थापित करते हैं। कारणों को अंकित किए जाने का महत्व इस बात पर दिया जाता है कि यदि निर्णय से किसी रहस्यमय चेहरे का पता चले, उसके मौन से न्यायालय द्वारा अपीलीय कार्य के निष्पादन या निर्णय की वैद्यता का निर्धारण करने वाली न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करना लगभग असंभव हो सकता है। कारण दिए जाने का अधिकार सुदृढ न्यायिक प्रणाली का अनिवार्य हिस्सा है। जो न्यायालय मामले में द्वारा न्यायिक विवेक को दर्शाता हो। दूसरा तर्क यह है कि प्रभावित पक्ष उसके विरूद्ध किए गए निर्णय की वजह जान सके। आदेश में कारण स्पष्ट करना प्राकृतिक न्याय की हितकारी आवश्यकताओं में से एक है।

10- उक्त समस्त तथ्य पंजाब राज्य बनाम भाग सिंह (2004) 1 एसीसी 547 में अभिनिर्णित किए गए।

11- उक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय को अपील की इजाजत देने हेतु निर्देशित किया जाना उपयुक्त है क्योंकि उठाए गए आधार सारहीन नहीं है।

12- अपील स्वीकार की जाती है।

बी.बी.बी. अपील स्वीकृत है।

[यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी **हर्ष मीणा (आर.जे.एस.)** द्वारा किया गया है।]

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।